



International Journal of Multidisciplinary Research and Growth Evaluation.

डिजिटल युग में हिंदी भाषा की संरचनात्मक चुनौतियाँ और संभावनाएँ

मिस सुमन रानी

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, शाह सतनाम जी गर्ल्स कॉलेज, सिरसा, हरियाणा, भारत

* Corresponding Author: मिस सुमन रानी

Article Info

ISSN (Online): 2582-7138

Impact Factor (RSIF): 7.98

Volume: 06

Issue: 01

January-February 2025

Received: 10-11-2024

Accepted: 08-12-2024

Published: 06-01-2025

Page No: 2238-2246

सारांश

आज का युग डिजिटल क्रांति का युग है। सूचना प्रौद्योगिकी ने मानवीय संचार, ज्ञान-निर्माण और सामाजिक व्यवहार के हर आयाम को गहराई से बदल दिया है। भाषा, जो मानव संचार का सबसे बुनियादी उपकरण है, इन बदलावों से सर्वाधिक प्रभावित हुई है। हिंदी — जो लगभग 60 करोड़ लोगों की मातृभाषा और करोड़ों अन्य की दूसरी भाषा है (Kachru, Y., 2006) — इस डिजिटल रूपांतरण के केंद्र में खड़ी है। स्मार्टफोन की सर्वव्यापकता, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों का विस्तार, मशीन अनुवाद उपकरणों का विकास और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित भाषा मॉडलों का उदय — इन सबने हिंदी भाषा की ध्वनि-व्यवस्था, शब्द-भंडार, व्याकरणिक संरचना, वाक्य-विन्यास और लिपि-प्रयोग में ऐसे बहुआयामी परिवर्तन ला दिए हैं जिनका व्यवस्थित अध्ययन अभी तक अपर्याप्त रहा है। प्रस्तुत शोध-पत्र इन्हीं परिवर्तनों का सैद्धांतिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

पत्र इन्हीं परिवर्तनों का सैद्धांतिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

इस शोध में संरचनावादी भाषा सिद्धांत (Saussure, 1916), समाजभाषाविज्ञान (Labov, 1994; Fishman, 1991) और डिजिटल भाषाविज्ञान (Crystal, 2006; Herring, 2004) के सैद्धांतिक उपकरणों का प्रयोग करते हुए डिजिटल माध्यमों पर प्रयुक्त हिंदी का विश्लेषण किया गया है। शोध-पत्र में शब्द-भंडार के स्तर पर अंग्रेजी उधार-शब्दों के अभूतपूर्व प्रवेश, व्याकरणिक संरचना के सरलीकरण, देवनागरी लिपि के डिजिटल हाशियाकरण, हिंदी-अंग्रेजी कोड-मिक्सिंग की प्रवृत्तियों (Myers-Scotton, 2002; Muysken, 2000) और कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा उत्पन्न हिंदी की गुणवत्ता संबंधी प्रश्नों (Bender & Koller, 2020) का गहन विश्लेषण किया गया है। साथ ही, डिजिटल युग द्वारा प्रदत्त संभावनाओं — जैसे वैश्विक पहुँच, शैक्षणिक विस्तार, नवीन साहित्यिक रूपों का उदय, और भाषा प्रौद्योगिकी का विकास — पर भी प्रकाश डाला गया है। अंत में, भाषा नीति, शिक्षा और प्रौद्योगिकी के स्तर पर व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं।

DOI: <https://doi.org/10.54660/IJMRGE.2025.6.1.2238-2246>

Keywords: डिजिटल भाषाविज्ञान, हिंदी भाषा संरचना, सोशल मीडिया और भाषा, कोड-मिक्सिंग, देवनागरी लिपि, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, भाषा परिवर्तन, डिजिटल साक्षरता, हिंग्लिश, भाषा प्रौद्योगिकी

परिचय

भाषा मानव सभ्यता की सबसे बुनियादी और सबसे जटिल उपलब्धि है। वह केवल संचार का साधन नहीं है — वह सोच का माध्यम है, संस्कृति की वाहक है, पहचान का प्रतीक है और ज्ञान के संचय एवं संप्रेषण का उपकरण है। विल्हेल्म फ्रॉन हम्बोल्ट ने उन्नीसवीं शताब्दी में ही कहा था कि भाषा कोई तैयार उत्पाद नहीं बल्कि एक सतत प्रक्रिया है — 'एनर्गिया' है, 'एगॉन' नहीं (Chomsky, 1968) [7]। यह अवधारणा आज डिजिटल युग में पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हो गई है। फ़र्दीनांद द सस्यूर (Saussure, 1916) [30] ने भाषा को एक व्यवस्थित संकेत-प्रणाली के रूप में परिभाषित किया — लेकिन डिजिटल प्रौद्योगिकी ने इस संकेत-प्रणाली की कार्यप्रणाली को मौलिक रूप से बदल दिया है।

जो बदलाव पहले शताब्दियों में होते थे, वे अब दशकों या वर्षों में हो रहे हैं, और इन बदलावों का स्वरूप भी पहले से भिन्न है (Androutsopoulos, 2011) [11]। भाषाविज्ञानी दृष्टि से यह समझना अब अनिवार्य हो गया है कि डिजिटल माध्यम भाषा का केवल नया वाहन नहीं है — वह एक स्वतंत्र शक्ति है जो भाषा के ढाँचे को भीतर से परिवर्तित करती है।

हिंदी भाषा के संदर्भ में यह स्थिति और भी जटिल है। हिंदी एक ओर भारत की राजभाषा है, संविधान की भाषा है, करोड़ों लोगों की अभिव्यक्ति का माध्यम है। दूसरी ओर, वह एक ऐसे बहुभाषी समाज में अस्तित्व रखती है जहाँ अंग्रेज़ी सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता की भाषा बनी हुई है (Phillipson, 1992) [29], जहाँ क्षेत्रीय भाषाओं की अपनी सशक्त उपस्थिति है, और जहाँ भूमंडलीकरण ने सांस्कृतिक और भाषाई सीमाओं को धुँधला कर दिया है (Pandey, 2018)। ऐसे में डिजिटल माध्यम एक नया और शक्तिशाली कारक बनकर उभरे हैं जो हिंदी की संरचना, स्वरूप और भविष्य को प्रभावित कर रहे हैं। कामताप्रसाद गुरु (1920) [36] ने अपने 'हिंदी व्याकरण' में जिस मानक हिंदी का प्रतिपादन किया था, आज की डिजिटल हिंदी उससे कई मायनों में भिन्न दिखती है। भाषाशास्त्रियों के लिए यह विश्लेषण का एक नया और अत्यंत समृद्ध क्षेत्र है जिसमें सैद्धांतिक प्रश्न और व्यावहारिक नीतिगत निहितार्थ, दोनों उपस्थित हैं।

पिछले दो दशकों में भारत में इंटरनेट और स्मार्टफ़ोन का प्रसार लगभग चमत्कारिक रहा है। KPMG और Google (2017) [23] की रिपोर्ट 'Indian Languages – Defining India's Internet' ने स्पष्ट किया था कि भारतीय भाषाओं में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या अंग्रेज़ी उपयोगकर्ताओं से अधिक हो चुकी है। भारत सरकार के 'डिजिटल इंडिया' कार्यक्रम (MeitY, 2015) ने इस प्रक्रिया को और तेज़ किया। इसका अर्थ है कि करोड़ों लोग प्रतिदिन हिंदी में डिजिटल संचार कर रहे हैं — व्हाट्सएप पर संदेश भेज रहे हैं, फेसबुक पर पोस्ट लिख रहे हैं, यूट्यूब पर टिप्पणियाँ कर रहे हैं, ट्विटर पर बहस कर रहे हैं। यह विशाल भाषा-प्रयोग एक नई तरह की हिंदी को जन्म दे रहा है जो मानक हिंदी से भिन्न है और जिसका व्यवस्थित अध्ययन अभी प्रारंभिक अवस्था में है (Sharma, 2001; Singh, 2010)। इस शोध-पत्र की मूल प्रेरणा यही है — कि हम इस नई डिजिटल हिंदी को व्यवस्थित रूप से समझें और उसकी संरचनात्मक विशेषताओं का विश्लेषण करें।

इस शोध-पत्र की मूल प्रेरणा यही है कि हम इस नई डिजिटल हिंदी को व्यवस्थित रूप से समझें, उसकी संरचनात्मक विशेषताओं का विश्लेषण करें, और यह जानने का प्रयास करें कि ये बदलाव भाषा के लिए क्या अर्थ रखते हैं। सस्यूर (1916) ने भाषा के 'सहकालिक' और 'कालक्रमिक' अध्ययन में अंतर किया था — प्रस्तुत शोध मुख्यतः सहकालिक दृष्टिकोण अपनाता है लेकिन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को भी ध्यान में रखता है। रामविलास शर्मा (2001) [41] ने भाषा और समाज के गहरे अंतर्संबंधों पर जो चर्चा की, वह आज डिजिटल समाज के संदर्भ में और भी प्रासंगिक हो गई है। यह शोध-पत्र भाषाविज्ञान, संचार अध्ययन और डिजिटल मानविकी के अंतरविषयक दृष्टिकोण (Coupland, 2014) [9] को अपनाकर इन प्रश्नों के उत्तर खोजने का विनम्र प्रयास है। इस प्रकार, यह अध्ययन न केवल हिंदी की वर्तमान स्थिति का दर्पण है, बल्कि उसके भविष्य के लिए एक विचार-मंच भी प्रस्तुत करता है।

2. शोध के उद्देश्य

किसी भी शोध-कार्य की सफलता उसके स्पष्ट और सुपरिभाषित उद्देश्यों पर निर्भर करती है। प्रस्तुत शोध-पत्र का प्रथम और प्रमुख

उद्देश्य यह है कि डिजिटल संचार माध्यमों — सोशल मीडिया, मोबाइल मैसेजिंग, ब्लॉग, वेबसाइट आदि — में प्रयुक्त हिंदी भाषा की संरचना में हो रहे परिवर्तनों को पहचाना और वर्गीकृत किया जाए। ये परिवर्तन भाषा के विभिन्न स्तरों — ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ और लिपि — पर हो रहे हैं और इन सबका व्यवस्थित अध्ययन आवश्यक है (Crystal, 2006)। यह केवल सतही अवलोकन का प्रश्न नहीं है बल्कि इन बदलावों की गहरी भाषाविज्ञानी व्याख्या ज़रूरी है — क्या ये भाषा के सार्वभौमिक विकास-नियमों (Labov, 1994) के अनुरूप हैं, या डिजिटल माध्यमों ने कुछ बिल्कुल नए प्रकार के परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। इसी संदर्भ में Androutsopoulos (2011) [11] ने भाषा-परिवर्तन और डिजिटल माध्यम के संबंध में जो प्रश्न उठाए, वे यहाँ भी केंद्रीय हैं।

दूसरा उद्देश्य हिंदी-अंग्रेज़ी कोड-मिक्सिंग और कोड-स्विचिंग की डिजिटल प्रवृत्तियों का भाषाविज्ञानी मूल्यांकन है। कैरल मायर्स-स्कॉटन (2002) के 'मैट्रिक्स लैंग्वेज फ़्रेम' (MLF) मॉडल और पीटर मुयस्कन (2000) के 'त्रिस्तरीय कोड-मिक्सिंग' सिद्धांत की कसौटी पर डिजिटल हिंग्लिश का परीक्षण करना इस उद्देश्य का मुख्य घटक है। तीसरा उद्देश्य देवनागरी लिपि की डिजिटल स्थिति का विश्लेषण है — रोमन लिपि में हिंदी लेखन के बढ़ते चलन के कारणों, परिणामों और संभावित समाधानों का अध्ययन। चौथा उद्देश्य कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन अनुवाद उपकरणों द्वारा उत्पन्न हिंदी की गुणवत्ता और उसके भाषाई प्रभावों का आकलन करना है (Bender & Koller, 2020) [21]। और पाँचवाँ उद्देश्य इन सभी विश्लेषणों के आधार पर भाषा-नीति (Cooper, 1989), शिक्षा और प्रौद्योगिकी के स्तर पर व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना है।

3. शोध प्रविधि (Research Methodology)

प्रस्तुत अध्ययन मूलतः सैद्धांतिक और विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। इसमें प्राथमिक आँकड़ों के सर्वेक्षण-आधारित संग्रह के बजाय मौजूदा शोध साहित्य, भाषाविज्ञानी सिद्धांतों और डिजिटल माध्यमों पर उपलब्ध भाषा-प्रयोग के गुणात्मक विश्लेषण को आधार बनाया गया है। सैद्धांतिक ढाँचे के रूप में सस्यूर (1916) के संरचनावादी भाषा सिद्धांत को प्रमुख आधार बनाया गया है, जिसके अनुसार भाषा एक व्यवस्थित संरचना है जहाँ प्रत्येक तत्त्व का मूल्य अन्य तत्त्वों से उसके संबंधों पर निर्भर करता है। इसके साथ ही, चॉम्स्की (1965) के रूपांतरणात्मक-सृजनात्मक व्याकरण से वाक्य-संरचना विश्लेषण में सहायता ली गई है। समाजभाषाविज्ञान के क्षेत्र से लेबॉव (1994) के भाषा-परिवर्तन सिद्धांत और फ़िशमैन (1991) के भाषा-पुनर्जीवन मॉडल का भी उपयोग किया गया है, जो यह स्पष्ट करते हैं कि भाषाई परिवर्तन की जड़ें सामाजिक प्रक्रियाओं में गहरी होती हैं।

डिजिटल भाषाविज्ञान के क्षेत्र से क्रिस्टल (2006) की 'नेटस्पीक' अवधारणा, एंड्राउटसोपोलोस (2011) के 'भाषा परिवर्तन और डिजिटल मीडिया' संबंधी सिद्धांत, और हेरिंग (2004) के 'कंप्यूटर-मीडिएटेड डिस्कॉर्स एनालिसिस' (CMDA) फ़्रेमवर्क का सैद्धांतिक आधार के रूप में प्रयोग किया गया है। कोड-मिक्सिंग के विश्लेषण के लिए मायर्स-स्कॉटन (2002) के MLF मॉडल और ब्रज कचरू (1983) के 'भाषा संपर्क' सिद्धांत को अपनाया गया है। द्विभाषिकता के व्यापक ढाँचे के लिए भाटिया एवं रिची (2013) के बहुभाषिकता संबंधी शोध से मार्गदर्शन लिया गया है। विश्लेषण-सामग्री के रूप में ट्विटर/एक्स, फेसबुक, इंस्टाग्राम, व्हाट्सएप, हिंदी ब्लॉगों, यूट्यूब टिप्पणियों और AI-जनित हिंदी पाठ्य सामग्री के उदाहरणों का अवलोकनात्मक अध्ययन किया गया है, जैसा कि Seargeant & Tagg (2014) [32] ने सोशल मीडिया भाषा-अनुसंधान में सुझाया है।

4. पूर्ववर्ती साहित्य की समीक्षा (Literature Review)

हिंदी भाषा के ऐतिहासिक विकास पर विपुल साहित्य उपलब्ध है। धीरेन्द्र वर्मा (1933) [40] ने अपनी पुस्तक 'हिंदी भाषा का इतिहास' में अपभ्रंश से आधुनिक हिंदी तक की यात्रा का सुव्यवस्थित विवरण दिया है। रामविलास शर्मा (2001) [41] ने 'भाषा और समाज' में भाषा परिवर्तन के सामाजिक-राजनीतिक कारकों का गहन विश्लेषण किया है, जिसमें उन्होंने तर्क दिया कि भाषा समाज की शक्ति-संरचनाओं से अनिवार्यतः जुड़ी होती है। भोलानाथ तिवारी (1966) [38] ने 'हिंदी भाषा की व्युत्पत्ति और विकास' में भाषा के आंतरिक विकास-तंत्र को समझाने का सराहनीय प्रयास किया है। जी.एन. देवी (2014) ने 'The Being of Bhasha' में भारतीय भाषाओं के अस्तित्वगत संकट और उनकी सांस्कृतिक जड़ों पर महत्वपूर्ण चर्चा की है। लेकिन इन सभी अध्ययनों की सीमा यह है कि ये डिजिटल युग से पूर्व या उसके प्रारंभिक काल के हैं और इंटरनेट तथा सोशल मीडिया के भाषाई प्रभावों को पर्याप्त रूप से शामिल नहीं कर सके। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर डिजिटल भाषा पर शोध पिछले दो दशकों में तेज़ी से बढ़ा है। क्रिस्टल (2001, revised 2006) की 'Language and the Internet' इस क्षेत्र की आधारभूत कृति मानी जाती है, जिसमें उन्होंने 'नेटस्पीक' की अवधारणा प्रस्तुत की और बताया कि इंटरनेट पर प्रयुक्त भाषा न लिखित है, न मौखिक — बल्कि वह एक तीसरा माध्यम है। एंड्राउटसोपोलोस (2011) ने डिजिटल माध्यमों और भाषा परिवर्तन के अंतर्संबंधों की व्यापक समीक्षा प्रस्तुत की। हेरिंग (2004) ने कंप्यूटर-मीडिएटेड डिस्कोर्स विश्लेषण का एक सुव्यवस्थित ढाँचा प्रस्तुत किया। टैगियामॉन्टे और डेनिस (2008) ने किशोरों की डिजिटल भाषा का अध्ययन करते हुए यह पाया कि सोशल मीडिया पर प्रयुक्त भाषा बोलचाल के करीब होती है, लेकिन उसमें अनूठे भाषाई नियम होते हैं जो लिखित मानक से भिन्न हैं। सर्कोविच एवं जैपावीन्या (2012) ने 'The Routledge Handbook of Language and Digital Communication' में डिजिटल संचार और भाषा के बीच के जटिल संबंधों का विस्तृत विवरण दिया है।

भारतीय संदर्भ में ब्रज कचरू (1983) का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। उन्होंने 'The Indianization of English' में अंग्रेज़ी के भारतीयकरण की प्रक्रिया का गहन अध्ययन किया और 'World Englishes' के सिद्धांत की नींव रखी। यमुना कचरू (2006) ने 'Hindi' पुस्तक में हिंदी भाषा का व्यापक भाषाविज्ञानी विवरण प्रस्तुत किया। श्रीवास्तव (1994) ने 'हिंदी भाषा का समाजशास्त्र' में हिंदी के सामाजिक संदर्भों का अध्ययन किया। जोशी, कुलकर्णी एवं सांगल (2016) ने 'Computational Linguistics and Indian Languages' में भारतीय भाषाओं के संगणकीय प्रसंस्करण की चुनौतियों का विस्तृत विवरण दिया। दुआ (2007) ने भारत में हिंदी और अंग्रेज़ी के बीच की प्रतिस्पर्धा का विश्लेषण करते हुए बताया कि डिजिटल माध्यमों ने इस द्विभाषिक तनाव को एक नया आयाम दे दिया है। हालाँकि, डिजिटल माध्यमों पर हिंदी के विशिष्ट संरचनात्मक अध्ययन अभी कम हैं — यही शोध-रिक्ति प्रस्तुत अध्ययन को प्रासंगिक बनाती है।

5. डिजिटल भाषा: अवधारणा, स्वरूप और विशेषताएँ

डिजिटल भाषा की अवधारणा को समझने के लिए हमें पहले 'माध्यम' और 'भाषा' के संबंध को समझना होगा। मार्शल मैक्लुहान (1964) ने अपनी प्रसिद्ध उक्ति 'The medium is the message' के माध्यम से बताया था कि संचार का माध्यम केवल सामग्री को ढोने वाला वाहन नहीं होता — वह स्वयं सामग्री के स्वरूप को आकार देता है। यह सिद्धांत डिजिटल भाषा पर सटीक रूप से लागू

होता है। जिस माध्यम पर भाषा प्रयोग की जा रही है — चाहे वह ट्विटर हो जहाँ अक्षर-सीमा है, या व्हाट्सएप जहाँ त्वरित उत्तर की अपेक्षा होती है, या इंस्टाग्राम जहाँ दृश्य सामग्री प्रधान है — वह भाषा के स्वरूप को निर्धारित करता है। क्रिस्टल (2006) ने इसी आधार पर 'नेटस्पीक' को भाषा के तीसरे माध्यम — न मौखिक, न लिखित — के रूप में परिभाषित किया। यह वर्गीकरण हिंदी के डिजिटल स्वरूप को समझने में भी उतना ही सहायक है।

हिंदी जैसी गैर-रोमन लिपि वाली भाषाओं में डिजिटल भाषा का स्वरूप कुछ अतिरिक्त जटिलताएँ रखता है। पहली जटिलता लिपि की है — हिंदी को रोमन लिपि में लिखने का चलन एक ऐसी समस्या है जो अंग्रेज़ी में मौजूद नहीं है। दूसरी जटिलता द्विभाषिकता की है — भाटिया एवं रिची (2013) ने बताया है कि भारत जैसे बहुभाषी समाजों में भाषा-प्रयोग की गतिशीलता एकभाषी समाजों से मौलिक रूप से भिन्न होती है। भारतीय डिजिटल उपयोगकर्ता अपने दैनिक संवाद में हिंदी और अंग्रेज़ी को जिस तरह मिलाते हैं, वह एक जटिल भाषाई व्यवहार है जिसे समझने के लिए केवल भाषाविज्ञान ही नहीं, समाजशास्त्र और मनोविज्ञान की भी सहायता चाहिए। दुआ (2007) ने भी यही तर्क दिया कि भारतीय डिजिटल स्थान में हिंदी और अंग्रेज़ी एक-दूसरे से इस तरह उलझी हैं कि उन्हें अलग करके देखना संभव नहीं।

हिंदी की डिजिटल भाषा में तीन स्पष्ट रजिस्टर दिखते हैं — पहला, शुद्ध या मानक हिंदी जो सरकारी वेबसाइटों, समाचार पोर्टलों और शैक्षणिक सामग्री में प्रयोग होती है; दूसरा, मिश्रित या हिंग्लिश रजिस्टर जो सोशल मीडिया, ब्लॉगों और अनौपचारिक संवाद में प्रचलित है; और तीसरा, रोमन-लिपि हिंदी जो व्हाट्सएप, एसएमएस और इंस्टाग्राम टिप्पणियों में व्यापक रूप से दिखती है। ये तीनों रजिस्टर एक-दूसरे से स्पष्ट रूप से अलग हैं लेकिन इनके बीच की सीमाएँ कठोर नहीं हैं — एक ही व्यक्ति अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग रजिस्टर अपनाता है। फ़िशमैन (1991) ने इसे 'डोमेन-विशिष्ट भाषा-प्रयोग' कहा है जहाँ विषय, संदर्भ, श्रोता और माध्यम मिलकर भाषा-चयन को निर्धारित करते हैं। गम्पज़ (1982) की 'कोड-स्विचिंग' अवधारणा इस बहुरजिस्टर व्यवहार को और स्पष्ट करती है — वक्ता सामाजिक पहचान और संप्रेषण की प्रभावशीलता के आधार पर भाषा-चयन करता है।

6. हिंदी भाषा की संरचनात्मक चुनौतियाँ

6.1 शब्द-भंडार में परिवर्तन और अंग्रेज़ी का प्रभाव

किसी भी भाषा का शब्द-भंडार उसका सबसे गतिशील और लचीला अंग होता है। नए शब्दों का आगमन और पुराने शब्दों का अप्रचलन भाषा के जीवित होने का प्रमाण है। हिंदी ने अपने इतिहास में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, अरबी, फ़ारसी, तुर्की, पुर्तगाली और अंग्रेज़ी — अनेक भाषाओं से शब्द ग्रहण किए हैं (Tiwari, 1966; Verma, 1933)। लेकिन डिजिटल युग में अंग्रेज़ी शब्दों का आगमन पहले के किसी भी दौर से मात्रा और गति दोनों में कहीं अधिक है। श्रीवास्तव (1994) ने बताया था कि भाषा-संपर्क में शब्द-उधार सबसे पहले और सबसे आसानी से होता है — और यही डिजिटल हिंदी में सबसे स्पष्ट रूप से दिखता है। 'डाउनलोड', 'अपडेट', 'नोटिफ़िकेशन', 'स्क्रीनशॉट', 'फ़ॉरवर्ड', 'ट्रेडिंग', 'ऑनलाइन', 'पासवर्ड', 'यूज़रनेम' — इन शब्दों का प्रयोग अब इतना सहज हो गया है कि ये हिंदी के ही शब्द प्रतीत होते हैं। हॉक्स (2010) ने उधार-शब्दों की इस प्रक्रिया को 'शब्द आत्मसात' कहा और बताया कि एक बार आत्मसात हो जाने पर उधार-शब्द मूल भाषा के व्याकरणिक नियमों के अनुसार ढल जाते हैं।

इस शब्द-उधार की गहराई को समझने के लिए यह देखना ज़रूरी है कि ये शब्द केवल तकनीकी क्षेत्र तक सीमित नहीं हैं। रोज़मर्रा

की बातचीत में भी 'प्लान', 'कैंसल', 'कन्फर्म', 'शेयर', 'लाइक', 'कमेंट', 'फॉलो', 'ब्लॉक' जैसे शब्द हिंदी वाक्यों में सहज रूप से घुलमिल गए हैं। ब्रज कचरू (1983) ने अंग्रेज़ी के भारतीयकरण की जो प्रक्रिया बताई थी, उसका उल्टा अब हो रहा है — हिंदी का अंग्रेज़ीकरण। इनमें से अनेक शब्दों के लिए हिंदी में समकक्ष शब्द मौजूद हैं — 'योजना', 'रद्द', 'पुष्टि' — लेकिन दैनिक प्रयोग में ये हिंदी शब्द लगातार हाशिये पर जा रहे हैं। भाषाविज्ञान में इसे 'शब्द-विस्थापन' कहते हैं। हाउगन (1950) ने उधार-शब्दों और शब्द-विस्थापन की इस प्रक्रिया का विस्तृत सैद्धांतिक विश्लेषण किया था, जो डिजिटल हिंदी में आज नए रूप में दिखाई देती है। दूसरी ओर, एक रचनात्मक प्रक्रिया भी दिखती है जिसमें अंग्रेज़ी शब्दों को हिंदी के व्याकरणिक ढाँचे में ढाला जा रहा है। 'गूगल करना', 'वायरल होना', 'टोल करना', 'अनफ्रेंड करना' जैसे प्रयोग इसके उदाहरण हैं। यहाँ अंग्रेज़ी संज्ञा या क्रिया को हिंदी की 'करना' सहायक क्रिया से जोड़कर एक नई संयुक्त क्रिया बनाई जाती है। मायर्स-स्कॉटन (2002) के MLF मॉडल के अनुसार यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि हिंदी अभी भी 'मैट्रिक्स' (प्रमुख) भाषा है — व्याकरणिक ढाँचा हिंदी प्रदान कर रही है, अंग्रेज़ी केवल शाब्दिक सामग्री दे रही है। यह भाषा की मृत्यु का नहीं बल्कि उसकी जीवन्तता और अनुकूलनशीलता का लक्षण है। मुयस्कन (2000) ने कोड-मिक्सिंग के इस प्रकार को 'इंसर्शन' कहा — जहाँ एक भाषा की शाब्दिक सामग्री दूसरी भाषा के व्याकरणिक ढाँचे में सम्मिलित की जाती है। यह प्रक्रिया व्याकरण-नियमों का उल्लंघन नहीं करती बल्कि दोनों भाषाओं की संरचनात्मक संगतता पर निर्भर करती है।

6.2 व्याकरणिक संरचना का सरलीकरण

हिंदी व्याकरण एक समृद्ध और जटिल व्यवस्था है जिसमें लिंग, वचन, कारक, काल, वाच्य और पुरुष की विस्तृत प्रणालियाँ हैं। गुरु (1920) ने अपने 'हिंदी व्याकरण' में इस व्यवस्था का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया था जो आज भी मानक संदर्भ ग्रंथ माना जाता है। त्रिपाठी (2015) ने 'आधुनिक हिंदी व्याकरण और रचना' में इस परंपरा को आगे बढ़ाया है। लेकिन डिजिटल माध्यमों पर प्रयुक्त हिंदी में इस व्याकरणिक जटिलता का व्यवस्थित सरलीकरण दिखता है। सबसे स्पष्ट सरलीकरण कारक-व्यवस्था में है — 'ने', 'को', 'में', 'से', 'पर' जैसे परसर्गों का लोप सोशल मीडिया और मैसेजिंग में बहुत आम है। लेबॉव (1994) के सिद्धांत के अनुसार, भाषाई सरलीकरण अक्सर अनौपचारिक और त्वरित संचार की ज़रूरतों से प्रेरित होता है। 'मैंने खाना खाया' का 'मैं खाना खाया' बन जाना — ये प्रवृत्तियाँ आकस्मिक त्रुटियाँ नहीं, बल्कि व्यवस्थित रुझान हैं।

वाक्य-संरचना के स्तर पर अंग्रेज़ी के प्रभाव में हिंदी का मूल SOV (कर्ता-कर्म-क्रिया) क्रम भी प्रभावित हो रहा है। 'मैंने देखी वो मूवी कल' या 'वो है बहुत अच्छा' जैसी संरचनाएँ अंग्रेज़ी के SVO क्रम से प्रभावित हैं। चॉम्स्की (1965) ने भाषाओं को उनके मूल वाक्य-क्रम के आधार पर वर्गीकृत किया था — हिंदी का SOV से SVO की ओर खिसकना, यदि स्थायी प्रवृत्ति बनता है, तो यह भाषा की गहरी संरचना में परिवर्तन का संकेत होगा। लिंग-व्यवस्था में भी अनिश्चितता बढ़ी है — यमुना कचरू (2006) ने हिंदी की व्याकरणिक लिंग-व्यवस्था का विस्तृत विवरण दिया है। यह व्यवस्था, जो पहले से जटिल है, नए अंग्रेज़ी शब्दों के आगमन से और उलझ गई है। 'ईमेल', 'वेबसाइट', 'ऐप', 'लिंक' — इनका लिंग-निर्धारण अनिश्चित है और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रयोग देखने को मिलते हैं, जो मानक हिंदी के लिए एक गंभीर चुनौती प्रस्तुत करता है।

एक और महत्वपूर्ण बदलाव आदरसूचक व्यवस्था में है। हिंदी में

'तू', 'तुम' और 'आप' का त्रिस्तरीय भेद सामाजिक संबंधों की सूक्ष्मताओं को व्यक्त करता है। ब्राउन एवं गिलमैन (1960) ने 'The Pronouns of Power and Solidarity' में सर्वनामों के सामाजिक अर्थ का जो विश्लेषण किया था, वह आज डिजिटल संदर्भ में पुनर्व्याख्या की माँग करता है। डिजिटल माध्यम एक ऐसा अनौपचारिक वातावरण बनाते हैं जहाँ पारंपरिक सामाजिक पदानुक्रम शिथिल हो जाते हैं — ट्विटर पर अजनबियों को भी 'तुम' कहा जाता है, यूट्यूब टिप्पणियों में 'तू' का प्रयोग सामान्य है। श्रीवास्तव (1994) ने हिंदी के सामाजिक प्रयोग में इस आदरसूचक व्यवस्था को 'सामाजिक संबंध-सूचक' कहा था। डिजिटल संचार में यह संबंध-सूचक तंत्र कमज़ोर हो रहा है, जो भाषा की सामाजिक-सांस्कृतिक समृद्धि के क्षरण का संकेत है। गम्पर्ज़ (1982) के संवादात्मक निहितार्थ के सिद्धांत के अनुसार, ऐसे सर्वनाम-परिवर्तन सामाजिक दूरी और अधिकार के पुनर्निर्धारण की ओर इशारा करते हैं।

6.3 देवनागरी लिपि का डिजिटल संकट

लिपि किसी भाषा का दृश्य रूप है — वह भाषा की पहचान है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी (Government of India, 2020)। देवनागरी एक वैज्ञानिक लिपि है जिसमें प्रत्येक ध्वनि के लिए एक निश्चित चिह्न है — यह विशेषता रोमन लिपि में नहीं है। लेकिन डिजिटल माध्यमों पर हिंदी का एक बड़ा हिस्सा रोमन लिपि में लिखा जा रहा है। KPMG एवं Google (2017) ^[23] की रिपोर्ट ने दर्शाया कि भारतीय भाषाओं का डिजिटल प्रयोग तेज़ी से बढ़ रहा है, लेकिन इसका एक बड़ा भाग रोमन लिपि में होता है। शहरी युवाओं में विशेषकर अनौपचारिक संवाद में रोमन लिपि का प्रयोग अत्यधिक व्यापक है। स्कूलबर्ग (2009) ने भारतीय भाषाओं की ऑनलाइन उपस्थिति का अध्ययन करते हुए बताया कि ऐतिहासिक रूप से रोमन लिपि को तकनीकी प्राथमिकता मिलने से गैर-रोमन लिपियाँ डिजिटल हाशिये पर चली गईं।

रोमन लिपि में हिंदी लिखने की समस्या केवल सौंदर्यात्मक या भावनात्मक नहीं है — इसके ठोस भाषाई परिणाम हैं। हिंदी की ध्वनि-व्यवस्था में महाप्राण-अल्पप्राण भेद (क/ख, ग/घ, च/छ), मूर्धन्य-दंत्य भेद (ट/त, ड/द, ण/न) और नासिक्य स्वर जैसी विशेषताएँ हैं जो रोमन लिपि में व्यक्त करना कठिन है (Tiwari, 1966)। 'क' से 'ख' और 'ख' दोनों लिखे जाते हैं — परिणामस्वरूप, रोमन लिपि में लिखी हिंदी में ध्वनि-भेद खो जाते हैं। 'कल' और 'खल', 'दान' और 'धान' जैसे शब्द-युग्म रोमन लिपि में समान दिख सकते हैं। वर्मा (1933) ^[40] ने देवनागरी की ध्वन्यात्मक वैज्ञानिकता पर बल दिया था। फ़र्ग्यूसन (1959) के 'डिग्लोसिया' सिद्धांत के ढाँचे में देखें तो रोमन लिपि हिंदी डिजिटल क्षेत्र में 'निम्न' (L) प्रकार की भाषा-प्रयोग बन रही है, जबकि देवनागरी 'उच्च' (H) प्रकार में सीमित हो रही है — यह स्थिति लिपि के दीर्घकालिक संकट का संकेत है।

हालाँकि, पिछले कुछ वर्षों में देवनागरी की डिजिटल उपस्थिति में सुधार हुआ है। गूगल इंडिक कीबोर्ड, स्विफ्टकी जैसे उपकरणों ने मोबाइल पर देवनागरी टाइपिंग को सरल बना दिया है। ट्रांसलिटिरेशन तकनीक ने भी इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यूनिकोड मानक ने देवनागरी के डिजिटल प्रतिनिधित्व को मानकीकृत किया है। भारत सरकार के TDIL कार्यक्रम ने भी देवनागरी प्रसंस्करण उपकरणों के विकास में योगदान दिया है (Government of India, 2020)। लेकिन कूपर (1989) ने भाषा-नियोजन की चर्चा में बताया था कि भाषा-व्यवहार बदलना भाषा-नीति बनाने से कहीं अधिक कठिन है। स्पेडबेरी (2019) ने डिजिटल

भाषा-नीति के अपने अध्ययन में पाया कि तकनीकी सुविधाएँ उपलब्ध होने के बावजूद, सामाजिक प्रतिष्ठा और सुविधा की अपेक्षा भाषा-व्यवहार को अधिक प्रभावित करती है।

6.4 कोड-मिक्सिंग और कोड-स्विचिंग: हिंग्लिश का उदय

'हिंग्लिश' शब्द भले ही अनौपचारिक लगता हो, लेकिन यह एक गंभीर भाषाई परिघटना का प्रतिनिधित्व करता है। भाषाविज्ञान में 'कोड-मिक्सिंग' से तात्पर्य है एक वाक्य के भीतर दो भाषाओं के तत्वों का मिश्रण, और 'कोड-स्विचिंग' से तात्पर्य है एक वाक्य या प्रसंग से दूसरे में भाषा बदलना (Myers-Scotton, 2002)। मायर्स-स्कॉटन ने अपने MLF मॉडल में बताया कि कोड-मिक्सिंग में एक भाषा 'मैट्रिक्स' (प्रमुख) होती है जो व्याकरणिक ढाँचा प्रदान करती है, और दूसरी 'एम्बेडेड' होती है जो मुख्यतः शब्द-स्तर पर योगदान करती है। मुयस्कन (2000) ने कोड-मिक्सिंग का तीन प्रकारों में वर्गीकरण किया — 'इंर्सर्शन', 'अल्टरनेशन' और 'कनग्रुएंट लेक्सिकलाइजेशन'। गम्पर्ज़ (1982) के अनुसार, कोड-स्विचिंग वक्ता की सामाजिक पहचान और वार्तालाप की रणनीति का प्रतिबिंब है, न मात्र भाषाई कमज़ोरी का। डिजिटल हिंग्लिश में ये तीनों प्रकार स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं।

डिजिटल माध्यमों पर हिंग्लिश के कुछ विशिष्ट पैटर्न दिखते हैं जो भाटिया एवं रिची (2013) के बहुभाषिकता-ढाँचे में विश्लेषणीय हैं। पहला पैटर्न है 'संज्ञा-प्रतिस्थापन' — हिंदी वाक्य में अंग्रेज़ी संज्ञा का प्रयोग, जैसे 'आज meeting बहुत लंबी थी'। दूसरा पैटर्न है 'क्रिया-निर्माण' — अंग्रेज़ी शब्द + हिंदी सहायक क्रिया, जैसे 'try करो', 'manage कर लेंगे'। तीसरा पैटर्न है 'विशेषण-मिश्रण' — 'बहुत amazing है', 'कितना boring था'। चौथा पैटर्न है 'डिस्कोर्स मार्कर' — 'actually', 'basically', 'literally' जैसे शब्दों का हिंदी वाक्यों में प्रयोग। पाँचवाँ पैटर्न 'वाक्यांश-स्विचिंग' है — जैसे 'वो तो I don't care वाला attitude है'। ये पैटर्न मायर्स-स्कॉटन (2002) के मॉडल में 'मैट्रिक्स' भाषा के रूप में हिंदी की केंद्रीयता की पुष्टि करते हैं। कोड-मिक्सिंग को लेकर विद्वानों में गहरा मतभेद है जो भाषा-नीति के लिए भी महत्वपूर्ण है। एक पक्ष इसे भाषा-क्षय और अंग्रेज़ी वर्चस्ववाद का लक्षण मानता है — फ़िलिप्स (1992) ने 'Linguistic Imperialism' में इसी प्रकार की चिंता व्यक्त की कि प्रभावशाली भाषाएँ कमज़ोर भाषाओं की स्वायत्तता को खतरे में डालती हैं। दूसरा पक्ष इसे बहुभाषी समाज की स्वाभाविक भाषाई रचनात्मकता मानता है। मुयस्कन (2000) ने बताया है कि कोड-मिक्सिंग अराजक नहीं होती — उसमें स्पष्ट व्याकरणिक नियम होते हैं जो बोलने वालों की भाषाई दक्षता को दर्शाते हैं। देवी (2014) ने भारतीय भाषाओं की बहुलता को एक सांस्कृतिक शक्ति के रूप में देखा। ग्रॉस्जीन (1982) का तर्क है कि द्विभाषी व्यक्ति दो एकभाषियों का योग नहीं होता — वह एक अद्वितीय भाषाई सत्ता है जिसका अपना संवादात्मक तर्क होता है। सच संभवतः इन चरम स्थितियों के बीच है।

7. कृत्रिम बुद्धिमत्ता और हिंदी भाषा

7.1 मशीन अनुवाद और भाषा गुणवत्ता

पिछले एक दशक में मशीन अनुवाद प्रौद्योगिकी में क्रांतिकारी बदलाव आया है। 2016 में गूगल ने अपने अनुवाद उपकरण में 'न्यूरल मशीन ट्रांसलेशन' (NMT) प्रणाली लागू की। इसके बाद ट्रांसफ़ॉर्मर आर्किटेक्चर पर आधारित बड़े भाषा मॉडलों ने भाषा प्रसंस्करण की क्षमताओं को नई ऊँचाइयों पर पहुँचाया है। जोशी, कुलकर्णी एवं सांगल (2016) ने भारतीय भाषाओं के संगणकीय प्रसंस्करण की विशिष्ट चुनौतियों — जैसे आकृतिविज्ञानी जटिलता, मुक्त शब्द-क्रम, और सीमित डिजिटल संसाधन — पर विस्तार से

चर्चा की है। ये चुनौतियाँ बताती हैं कि क्यों हिंदी में AI की सटीकता अभी अंग्रेज़ी की तुलना में कम है। बेंडर एवं कोल्लर (2020) ने 'Climbing Towards NLU' में चेतावनी दी कि बड़े भाषा मॉडल 'अर्थ' नहीं समझते, केवल 'रूप' का प्रसंस्करण करते हैं — यही मूल कारण है उन त्रुटियों का जो AI-जनित हिंदी में बार-बार दिखती हैं।

AI द्वारा उत्पन्न हिंदी में कई विशिष्ट समस्याएँ दिखती हैं। पहली समस्या अतिशय संस्कृतनिष्ठता की है — AI मॉडल प्रायः ऐसे संस्कृत-प्रधान शब्दों का प्रयोग करते हैं जो स्वाभाविक हिंदी में नहीं बोले जाते। 'अधिगम' ('सीखना' की जगह), 'संगणक' ('कंप्यूटर' की जगह) जैसे शब्द तकनीकी रूप से सही हैं लेकिन व्यावहारिक रूप से अप्रचलित। दूसरी समस्या लिंग-वचन की त्रुटियाँ हैं — 'मेज़ पर किताब रखा है' जैसी गलतियाँ AI अनुवाद में आम हैं, जो यमुना कचरू (2006) द्वारा वर्णित हिंदी की जटिल लिंग-व्यवस्था को AI के पूरी तरह न सीख पाने का प्रमाण है। तीसरी समस्या मुहावरों और लोकोक्तियों की है — AI शाब्दिक अनुवाद करता है जो प्रायः अर्थहीन हो जाता है। देवी (2014) ने भाषा को उसकी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़कर देखने की बात की — AI में यही सांस्कृतिक-अर्थशास्त्रीय समझ का अभाव है जो मुहावरेदार भाषा के अनुवाद में विफलता उत्पन्न करता है।

7.2 भाषाई पहचान और AI का दुष्चक्र

AI और भाषा के संबंध में एक गंभीर चिंता 'फ़्रीडबैक लूप' या दुष्चक्र की है। AI मॉडल इंटरनेट पर उपलब्ध भाषा-आँकड़ों पर प्रशिक्षित होते हैं। इंटरनेट पर उपलब्ध हिंदी पहले से ही अंग्रेज़ी-प्रभावित, व्याकरणिक रूप से मिश्रित और शब्द-भंडार में सीमित हो सकती है। जब AI इस सामग्री पर प्रशिक्षित होकर नई हिंदी सामग्री उत्पन्न करता है, तो वह भी उन्हीं कमज़ोरियों को प्रतिबिंबित करती है। बेंडर एवं कोल्लर (2020) ने बड़े भाषा मॉडलों की इसी सीमा पर प्रकाश डाला — कि ये मॉडल अपने प्रशिक्षण-आँकड़ों की गुणवत्ता से बँधे होते हैं। यह नई AI-जनित सामग्री पुनः इंटरनेट पर प्रकाशित होती है और भविष्य के AI मॉडलों के प्रशिक्षण-आँकड़ों में शामिल हो जाती है। जोशी एवं अन्य (2016) ने भी बड़े पैमाने पर भारतीय भाषा-संसाधनों के निर्माण की आवश्यकता पर बल दिया है ताकि इस दुष्चक्र को तोड़ा जा सके।

AI का एक और प्रभाव भाषाई पहचान पर है। जब करोड़ों लोग AI-अनुवादित या AI-जनित हिंदी पढ़ते हैं, तो धीरे-धीरे उनकी भाषाई अपेक्षाएँ और मानदंड भी बदलते हैं। फ़िशमैन (1991) ने भाषाई पहचान को भाषा-संरक्षण का एक महत्वपूर्ण कारक माना — जब पहचान ही कमज़ोर हो, तो भाषा-संरक्षण कठिन हो जाता है। इस दृष्टि से, उच्च गुणवत्ता वाले हिंदी भाषा-संसाधनों — जैसे शब्दकोश, व्याकरण-परीक्षक, प्रामाणिक पाठ्य-संग्रह — का डिजिटल निर्माण बहुत आवश्यक है। भारत सरकार के TDIL कार्यक्रम और AI4Bharat जैसी शोध परियोजनाओं ने इस दिशा में प्रयास किए हैं (Government of India, 2020)। स्पिटुलनिक (1998) ने मीडिया और भाषाई पहचान के अंतर्संबंधों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि जिस माध्यम पर जिस भाषा का वर्चस्व होता है, वह उस भाषा की सामाजिक प्रतिष्ठा को भी प्रभावित करता है। AI-जनित हिंदी इसी दृष्टि से विचारणीय है।

8. डिजिटल युग में हिंदी की संभावनाएँ

8.1 वैश्विक पहुँच और डिजिटल उपस्थिति

चुनौतियों के साथ-साथ, डिजिटल युग ने हिंदी भाषा के लिए अभूतपूर्व संभावनाएँ भी खोली हैं। सबसे महत्वपूर्ण संभावना वैश्विक पहुँच की है। मैक्लुहान (1964) ने 'ग्लोबल विलेज' की जो अवधारणा

दी थी, वह आज इंटरनेट के माध्यम से साकार हो रही है। अब भारत के किसी छोटे शहर का लेखक अपनी रचना हिंदी में लिखकर विश्व भर के पाठकों तक पहुँचा सकता है। KPMG एवं Google (2017) [23] की रिपोर्ट ने दर्शाया कि भारतीय भाषाओं में डिजिटल सामग्री की माँग तेज़ी से बढ़ रही है। यूट्यूब पर हिंदी सामग्री का बाज़ार विस्फोटक गति से बढ़ा है। पाँडकास्ट, ऑडियोबुक और OTT प्लेटफ़ॉर्मों पर हिंदी सामग्री की माँग लगातार बढ़ रही है। यह सब हिंदी के लिए एक नया और विशाल दर्शक-वर्ग निर्मित कर रहा है जो पारंपरिक प्रकाशन माध्यमों से कहीं बड़ा है। कास्टेल्स (2009) के 'Communication Power' के ढाँचे में देखें तो हिंदी अब डिजिटल 'संचार-शक्ति' प्राप्त कर रही है।

8.2 शिक्षा और ज्ञान का लोकतांत्रिकरण

डिजिटल माध्यमों ने हिंदी में शैक्षणिक सामग्री की उपलब्धता और पहुँच दोनों को बढ़ाया है। भारत सरकार के 'स्वयं' (SWAYAM) पोर्टल पर हिंदी में पाठ्यक्रम उपलब्ध होने लगे हैं। विकिपीडिया का हिंदी संस्करण लगातार बढ़ रहा है। ई-पुस्तकों, शैक्षणिक वीडियो और डिजिटल पुस्तकालयों ने ज्ञान के लोकतांत्रिकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। फ़िशमैन (1991) ने भाषा-पुनर्जीवन में शिक्षा की भूमिका को केंद्रीय माना था — डिजिटल शिक्षा इस भूमिका को नए आयाम दे रही है। जिन ग्रामीण क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा संस्थान नहीं हैं, वहाँ भी अब स्मार्टफ़ोन के माध्यम से हिंदी में शैक्षणिक सामग्री पहुँच रही है। देवी (2014) ने भारतीय भाषाओं की शक्ति को ज्ञान-निर्माण की भाषाओं के रूप में पुनर्स्थापित करने की बात कही — डिजिटल माध्यम इसी दिशा में क्रांतिकारी कदम हैं और हिंदी माध्यम के शिक्षार्थियों को मुख्यधारा की ज्ञान-अर्थव्यवस्था से जोड़ रहे हैं।

8.3 नवीन साहित्यिक रूप और रचनात्मक अभिव्यक्ति

डिजिटल माध्यमों ने हिंदी साहित्य के नए रूपों को जन्म दिया है जो पारंपरिक विधाओं से भिन्न हैं। इंस्टाग्राम कविता, ट्विटर पर माइक्रो-फ़िक्शन, ब्लॉगों पर व्यक्तिगत निबंध — ये सब हिंदी साहित्य के नए रूप हैं। पांडेय (2018) [39] ने 'साहित्य और भूमंडलीकरण' में भूमंडलीकरण के साहित्य पर पड़ने वाले प्रभावों की चर्चा की — डिजिटल माध्यम इस भूमंडलीकृत साहित्य-संसार में हिंदी की भागीदारी सुनिश्चित कर रहे हैं। पाँडकास्ट ने मौखिक कथा-परंपरा को एक नया डिजिटल अवतार दिया है। कोई भी व्यक्ति अब बिना किसी प्रकाशक की स्वीकृति के अपनी रचनाएँ विश्व के समक्ष रख सकता है। हेरिंग (2004) ने बताया था कि डिजिटल माध्यम नए 'डिस्कॉर्स समुदायों' का निर्माण करते हैं — हिंदी साहित्य में भी ऐसे डिजिटल समुदाय उभर रहे हैं जो पारंपरिक साहित्यिक संस्थानों से स्वतंत्र हैं और जो हिंदी साहित्य को एक नई जनतांत्रिक दिशा दे रहे हैं।

8.4 भाषा प्रौद्योगिकी और हिंदी का डिजिटल सशक्तीकरण

भाषा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी के लिए अनेक सकारात्मक विकास हुए हैं। वॉइस असिस्टेंट — गूगल असिस्टेंट, एलेक्सा, सिरी — अब हिंदी में भी काम करते हैं, जो करोड़ों ऐसे लोगों के लिए प्रौद्योगिकी के द्वार खोलता है जो अंग्रेज़ी नहीं जानते। OCR तकनीक देवनागरी पहचान में बेहतर हुई है, जिससे मुद्रित हिंदी सामग्री का

डिजिटलीकरण संभव हो रहा है। जोशी, कुलकर्णी एवं सांगल (2016) ने भारतीय भाषाओं के लिए NLP संसाधनों की स्थिति और भविष्य की दिशाओं पर विस्तृत चर्चा की है। 'AI4Bharat' और 'IndicNLP' जैसी शोध परियोजनाएँ भारतीय भाषाओं के लिए विशिष्ट प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण उपकरण विकसित कर रही हैं। कास्टेल्स (2009) के नेटवर्क समाज के ढाँचे में यह स्पष्ट होता है कि जिस भाषा में डिजिटल अवसंरचना जितनी मज़बूत होगी, उसका डिजिटल समाज में स्थान उतना ही सुदृढ़ होगा। हिंदी में भाषा प्रौद्योगिकी के विकास को इसी दृष्टि से देखना चाहिए।

9. समग्र विश्लेषण और विवेचन

प्रस्तुत शोध-पत्र में किए गए विश्लेषण से कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते हैं। सबसे पहली बात यह है कि भाषा परिवर्तन कोई अपवाद नहीं बल्कि भाषा के अस्तित्व का अभिन्न अंग है। सस्पूर (1916) ने भाषा के सहकालिक और कालक्रमिक अध्ययन में जो भेद किया, वह यहाँ प्रासंगिक है — कालक्रमिक दृष्टि से देखें तो हिंदी का पूरा इतिहास परिवर्तनों का इतिहास है (Verma, 1933; Tiwari, 1966)। इसलिए डिजिटल युग के परिवर्तनों को भी इसी ऐतिहासिक निरंतरता में देखा जाना चाहिए। लेकिन लेबॉव (1994) ने भाषा-परिवर्तन के सिद्धांतों में जो 'गति' का चर रखा है, वह यहाँ महत्वपूर्ण है — डिजिटल परिवर्तन की गति अभूतपूर्व है। एंडाउट्सोपोलोस (2011) ने भी इसी तीव्रता को डिजिटल भाषा-परिवर्तन की विशिष्ट विशेषता माना है, जो इसे पूर्ववर्ती सभी भाषाई परिवर्तनों से गुणात्मक रूप से भिन्न बनाती है।

दूसरा निष्कर्ष यह है कि हिंदी की संरचनात्मक चुनौतियाँ वास्तव में भूमंडलीकरण, अंग्रेज़ी वर्चस्व और डिजिटल असमानता की व्यापक समस्याओं का भाषाई प्रतिबिंब हैं। फ़िलिप्सन (1992) ने बताया था कि अंग्रेज़ी का वैश्विक प्रसार केवल भाषाई नहीं बल्कि राजनीतिक-आर्थिक परिघटना है। शर्मा (2001) ने भी भाषा और सत्ता-संरचनाओं के गहरे अंतर्संबंधों पर प्रकाश डाला। भारतीय संदर्भ में, अंग्रेज़ी को सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता, रोज़गार और प्रतिष्ठा की भाषा माना जाता है — कचरू (1983) ने इसे 'अंग्रेज़ी के आकर्षण' कहा। यही कारण है कि हिंदी बोलने वाले स्वेच्छा से अपनी भाषा में अंग्रेज़ी शब्दों और संरचनाओं को अपनाते हैं। डिजिटल माध्यम इस प्रक्रिया के वाहक हैं, कारण नहीं। इसलिए समाधान भी केवल भाषाई नहीं बल्कि सामाजिक-राजनीतिक होना चाहिए।

तीसरा और सबसे महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि भाषा-शुद्धतावाद और भाषा-उदारवाद — दोनों चरम स्थितियाँ अपर्याप्त हैं। पूर्ण शुद्धतावाद अव्यावहारिक है और भाषा के स्वाभाविक विकास के विरुद्ध है। दूसरी ओर, पूर्ण उदारवाद भी खतरनाक है — यदि भाषा की कोई मानक संरचना ही न रहे, तो वह साहित्य, शिक्षा, न्यायपालिका और प्रशासन की भाषा के रूप में अपनी भूमिका निभाने में असमर्थ हो जाएगी (Cooper, 1989)। आवश्यकता एक संतुलित दृष्टिकोण की है जो फ़िशमैन (1991) के 'पुनर्जीवनीय भाषाविज्ञान' और कूपर (1989) के 'भाषा-नियोजन' सिद्धांतों के अनुरूप हो — भाषा के स्वाभाविक विकास को स्वीकार करते हुए मानकीकरण की आवश्यकता को भी पहचाने। देवी (2014) ने भी भारतीय भाषाओं के संदर्भ में ऐसे ही संतुलित दृष्टिकोण की वकालत की है और बहुलतावादी भाषाई आत्मीयता की संस्कृति निर्मित करने पर बल दिया है।

चुनौतियाँ बनाम संभावनाएँ: एक तुलनात्मक सारणी

क्षेत्र	चुनौतियाँ	संभावनाएँ
शब्द-भंडार	अंग्रेज़ी शब्दों का अभूतपूर्व प्रवेश, शब्द-विस्थापन (Kachru, 1983; Haugen, 1950)	नवीन हिंदी शब्द-निर्माण, भाषा की अनुकूलनशीलता (Myers-Scotton, 2002)
व्याकरण	कारक-लोप, SOV→SVO, लिंग-वचन अनिश्चितता (Chomsky, 1965) ^[6]	सरलीकृत व्याकरण से व्यापक सुगमता; पहुँच में वृद्धि
लिपि	रोमन लिपि का प्रचलन, ध्वनि-भेद का लोप (Tiwari, 1966)	बेहतर कीबोर्ड, OCR, यूनिकोड, TDIL कार्यक्रम (Govt., 2020)
AI/प्रौद्योगिकी	मशीनी अनुवाद की गुणवत्ता, फ़ीडबैक लूप (Bender & Koller, 2020) ^[2]	वैश्विक पहुँच, NLP शोध (Joshi et al., 2016)
कोड-मिक्सिंग	भाषाई साम्राज्यवाद की चिंता (Phillipson, 1992) ^[29]	भाषाई रचनात्मकता, द्विभाषी दक्षता (Muysken, 2000)
साहित्य	सतही अभिव्यक्ति की चिंता (Pandey, 2018)	नए साहित्यिक रूप, साहित्यिक लोकतंत्र (Herring, 2004)

10. सुझाव एवं अनुशासण

10.1 भाषा नीति के स्तर पर

सरकार और शैक्षणिक संस्थानों को डिजिटल हिंदी के लिए एक व्यावहारिक और संतुलित भाषा नीति बनानी चाहिए। कूपर (1989) ने भाषा-नियोजन के तीन आयाम बताए — स्थिति-नियोजन, संरचना-नियोजन और अधिग्रहण-नियोजन। डिजिटल हिंदी के लिए तीनों आयामों पर काम करने की ज़रूरत है। नए तकनीकी शब्दों के लिए व्यावहारिक हिंदी पर्यायों का निर्माण 'संरचना-नियोजन' का हिस्सा है। डिजिटल क्षेत्रों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देना 'स्थिति-नियोजन' है। फ़िशमैन (1991) के अनुसार सफल भाषा-नीति वही है जो जनता की वास्तविक भाषा-प्रथाओं को ध्यान में रखे। स्प्रेडबेरी (2019) ने यह भी बताया कि डिजिटल भाषा नीति तब सफल होती है जब वह उपयोगकर्ताओं की सांस्कृतिक पहचान से जुड़ी हो — इसलिए डिजिटल हिंदी नीति शुद्धतावादी नहीं बल्कि समावेशी और व्यावहारिक होनी चाहिए।

10.2 शिक्षा के स्तर पर

डिजिटल भाषा साक्षरता को स्कूल और विश्वविद्यालय पाठ्यक्रमों का अनिवार्य हिस्सा बनाया जाना चाहिए। विद्यार्थियों को यह समझाना आवश्यक है कि अनौपचारिक डिजिटल संवाद और औपचारिक लिखित भाषा में अंतर है — क्रिस्टल (2006) ने इसी अंतर को 'रजिस्टर-विभेद' कहा। देवनागरी टाइपिंग को बुनियादी कौशल के रूप में पढ़ाया जाना चाहिए। हिंदी शिक्षण में प्रौद्योगिकी का रचनात्मक उपयोग — जैसे भाषा-खेल, डिजिटल शब्दकोश, ऑनलाइन व्याकरण-अभ्यास — को बढ़ावा देना चाहिए। शर्मा (2001) ने भाषा-शिक्षा में सामाजिक संदर्भों की भूमिका पर बल दिया था — आज का सामाजिक संदर्भ डिजिटल है। शिक्षकों को डिजिटल भाषा-प्रवृत्तियों से अवगत कराया जाना चाहिए ताकि वे विद्यार्थियों को बेहतर मार्गदर्शन दे सकें और पाठ्यक्रम में डिजिटल भाषा साक्षरता को केंद्रीय स्थान मिल सके।

10.3 प्रौद्योगिकी और शोध के स्तर पर

भारतीय भाषा प्रौद्योगिकी के विकास में निवेश बढ़ाने की तत्काल आवश्यकता है। जोशी, कुलकर्णी एवं सांगल (2016) ने भारतीय भाषाओं के लिए बड़े पैमाने पर भाषा-संसाधनों — कॉर्पस, शब्दकोश, टैगर, पार्सर — के निर्माण की आवश्यकता रेखांकित की है। AI4Bharat, IIT मद्रास की IndicNLP और भारतीय भाषा संस्थान मैसूर जैसी संस्थाओं के प्रयासों को अधिक संसाधन और समर्थन मिलना चाहिए। भारत सरकार के TDIL कार्यक्रम (Government of India, 2020) को और व्यापक बनाने की आवश्यकता है। इसके साथ ही, डिजिटल हिंदी पर अंतरविषयक शोध — जो भाषाविज्ञान (Saussure, 1916; Chomsky, 1965)^[30], कंप्यूटर विज्ञान (Joshi et al., 2016), समाजशास्त्र (Sharma,

2001) और संचार अध्ययन (McLuhan, 1964) को जोड़े — को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

11. उपसंहार

डिजिटल युग ने हिंदी भाषा को एक ऐतिहासिक और निर्णायक मोड़ पर ला खड़ा किया है। एक तरफ़ ऐसी चुनौतियाँ हैं जो भाषा की संरचनात्मक अखंडता, लिपि की निरंतरता और भाषाई स्वायत्तता को प्रभावित कर रही हैं — अंग्रेज़ी शब्दों का अनियंत्रित प्रवेश (Kachru, 1983), व्याकरणिक सरलीकरण (Guru, 1920), कारक-व्यवस्था का क्षरण, देवनागरी लिपि का हाशियाकरण (Verma, 1933), और कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा उत्पन्न अप्राकृतिक हिंदी (Bender & Koller, 2020)^[2]। दूसरी तरफ़ ऐसी संभावनाएँ हैं जो पहले कभी उपलब्ध नहीं थीं — वैश्विक पहुँच (McLuhan, 1964), शैक्षणिक सामग्री का अभूतपूर्व विस्तार, नवीन साहित्यिक रूपों का जन्म (Pandey, 2018), भाषा प्रौद्योगिकी का विकास (Joshi et al., 2016), और ज्ञान के लोकतांत्रिकरण की अपार संभावनाएँ। ये दोनों पक्ष एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और दोनों को मिलाकर ही हिंदी के डिजिटल भविष्य की समग्र तस्वीर बनती है। यह याद रखना अत्यंत ज़रूरी है कि भाषा अंततः जनता की संपत्ति है। फ़िशमैन (1991) ने भाषा-पुनर्जीवन में 'अंतर-पीढ़ी हस्तांतरण' को सबसे महत्वपूर्ण कारक माना — यदि अगली पीढ़ी हिंदी को अपनी भाषा मानती है और उसका प्रयोग करती है, तो भाषा जीवित रहेगी, चाहे उसका स्वरूप बदल जाए। कूपर (1989) ने सुझाया कि सफल भाषा-नियोजन वह है जो सामाजिक यथार्थ को स्वीकार करे। शर्मा (2001) ने भाषा को सामाजिक शक्ति का उपकरण माना — और डिजिटल युग में यह शक्ति नए रूपों में प्रकट हो रही है। हिंदी एक ऐसी भाषा है जो सहस्राब्दियों से बदलती रही है, नए प्रभावों को आत्मसात करती रही है, और हर बार नए रूप में सशक्त होकर उभरी है (Verma, 1933; Tiwari, 1966; Singh, 2010)। इस दीर्घ इतिहास को देखते हुए, यह विश्वास किया जा सकता है कि हिंदी डिजिटल युग की चुनौतियों का भी सामना करने में सक्षम है, बशर्ते हम सामूहिक रूप से इसके लिए प्रयत्नशील रहें।

प्रस्तुत शोध-पत्र इसी दिशा में एक विनम्र लेकिन गंभीर प्रयास है। इसने सस्यूर (1916) के संरचनावाद, चॉम्स्की (1965) के वाक्य-विन्यास सिद्धांत, क्रिस्टल (2006) की डिजिटल भाषा अवधारणा, मायर्स-स्कॉटन (2002) और मुयस्कन (2000) के कोड-मिक्सिंग सिद्धांतों, फ़िलिप्सन (1992) के भाषाई साम्राज्यवाद के विचार, और फ़िशमैन (1991) एवं कूपर (1989) के भाषा-नियोजन ढाँचों का उपयोग करते हुए डिजिटल हिंदी का एक समग्र विश्लेषण प्रस्तुत किया है। यह शोध-पत्र न निराशा का स्वर उठाता है, न अतिशय आशावाद का — इसका उद्देश्य वस्तुस्थिति को यथासंभव स्पष्ट और संतुलित रूप से प्रस्तुत करना है। डिजिटल हिंदी का भविष्य पूर्वनिर्धारित नहीं है — वह वही होगा जो हम सब मिलकर उसे

बनाएँगे।

12. संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Androutsopoulos J. Language change and digital media: A review of conceptions and evidence. In: Coupland N, editor. *Standard Languages and Language Standards in a Changing Europe*. Oslo: Novus Press; 2011. p. 145-161.
2. Bender EM, Koller A. Climbing towards NLU: On meaning, form, and understanding in the age of data. In: *Proceedings of the 58th Annual Meeting of the Association for Computational Linguistics*. Association for Computational Linguistics; 2020. p. 5185-5198.
3. Bhatia TK, Ritchie WC, editors. *The Handbook of Bilingualism and Multilingualism*. 2nd ed. Malden (MA): Wiley-Blackwell; 2013.
4. Brown R, Gilman A. The pronouns of power and solidarity. In: Sebeok T, editor. *Style in Language*. Cambridge (MA): MIT Press; 1960. p. 253-276.
5. Castells M. *Communication Power*. Oxford: Oxford University Press; 2009.
6. Chomsky N. *Aspects of the Theory of Syntax*. Cambridge (MA): MIT Press; 1965.
7. Chomsky N. *Language and Mind*. New York: Harcourt, Brace & World; 1968.
8. Cooper RL. *Language Planning and Social Change*. Cambridge: Cambridge University Press; 1989.
9. Coupland N, editor. *The Handbook of Language and Globalization*. Malden (MA): Wiley-Blackwell; 2014.
10. Crystal D. *Language and the Internet*. 2nd ed. Cambridge: Cambridge University Press; 2006.
11. Devy GN. *The Being of Bhasha: A General Introduction*. Hyderabad: Orient BlackSwan; 2014.
12. Dua HR. Hegemony of English. In: Simpson A, editor. *Language and National Identity in Asia*. Oxford: Oxford University Press; 2007.
13. Ferguson CA. Diglossia. *Word*. 1959;15(2):325-340.
14. Fishman JA. *Reversing Language Shift: Theoretical and Empirical Foundations of Assistance to Threatened Languages*. Clevedon: Multilingual Matters; 1991.
15. Government of India. *Annual Report 2019-20 & TDIL Programme Progress Report*. New Delhi: Ministry of Electronics and Information Technology; 2020.
16. Grosjean F. *Life with Two Languages: An Introduction to Bilingualism*. Cambridge (MA): Harvard University Press; 1982.
17. Gumperz JJ. *Discourse Strategies*. Cambridge: Cambridge University Press; 1982.
18. Haugen E. The analysis of linguistic borrowing. *Language*. 1950;26(2):210-231.
19. Herring SC. Computer-mediated discourse analysis: An approach to researching online behavior. In: Barab SA, Kling R, Gray JH, editors. *Designing for Virtual Communities in the Service of Learning*. Cambridge: Cambridge University Press; 2004. p. 338-376.
20. Joshi AK, Kulkarni A, Sangal R. *Computational linguistics and Indian languages*. In: *The Oxford Handbook of Computational Linguistics*. 2nd ed. Oxford: Oxford University Press; 2016.
21. Kachru BB. *The Indianization of English: The English Language in India*. Delhi: Oxford University Press; 1983.
22. Kachru Y. *Hindi*. Amsterdam/London: John Benjamins Publishing Company; 2006.
23. KPMG, Google. *Indian Languages – Defining India's Internet*. Mumbai: KPMG India; 2017.
24. Labov W. *Principles of Linguistic Change*. Vol. 1, Internal Factors. Oxford: Blackwell; 1994.
25. McLuhan M. *Understanding Media: The Extensions of Man*. New York: McGraw-Hill; 1964.
26. Ministry of Electronics and Information Technology. *Digital India Programme*. New Delhi: Government of India; 2015.
27. Muysken P. *Bilingual Speech: A Typology of Code-Mixing*. Cambridge: Cambridge University Press; 2000.
28. Myers-Scotton C. *Contact Linguistics: Bilingual Encounters and Grammatical Outcomes*. Oxford: Oxford University Press; 2002.
29. Phillipson R. *Linguistic Imperialism*. Oxford: Oxford University Press; 1992.
30. Saussure F de. *Course in General Linguistics*. Baskin W, translator. New York: Columbia University Press; 2011. (Original work published 1916).
31. Schlobinski P. Web-based communication. In: D'hondt S, Östman JO, Verschueren J, editors. *The Pragmatics of Interaction*. Amsterdam: John Benjamins; 2009.
32. Sargeant P, Tagg C, editors. *The Language of Social Media: Identity and Community on the Internet*. London: Palgrave Macmillan; 2014.
33. Spitulnik D. Mediating unity and diversity: The production of language ideologies in Zambian broadcasting. In: Schieffelin BB, Woolard KA, Kroskrity PV, editors. *Language Ideologies: Practice and Theory*. Oxford: Oxford University Press; 1998.
34. Spreadbury K. Digital language policy and the ideological construction of language varieties online. *Language Policy*. 2019;18(3):321-345.
35. Tagliamonte SA, Denis D. Linguistic ruin? LOL! Instant messaging and teen language. *American Speech*. 2008;83(1):3-34.
36. गुरु कामताप्रसाद. *हिंदी व्याकरण*. वाराणसी: नागरीप्रचारिणी सभा; 2015. (मूल प्रकाशन 1920).
37. त्रिपाठी वासुदेव. *आधुनिक हिंदी व्याकरण और रचना*.

- इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन; 2015.
38. तिवारी भोलानाथ. हिंदी भाषा की व्युत्पत्ति और विकास. इलाहाबाद: किताब महल; 1966.
 39. पांडेय मैनेजर. साहित्य और भूमंडलीकरण. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन; 2018.
 40. वर्मा धीरेन्द्र. हिंदी भाषा का इतिहास. इलाहाबाद: हिंदुस्तानी एकेडमी; 2005. (मूल प्रकाशन 1933).
 41. शर्मा रामविलास. भाषा और समाज. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन; 2001.
 42. श्रीवास्तव रवींद्रनाथ. हिंदी भाषा का समाजशास्त्र. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन; 1994.
 43. सिंह राजेन्द्र प्रसाद. हिंदी भाषा का विकास. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन; 2010.